मानस का हंस, अमृतलाल नागर

उपन्यास कथा साहित्य की आधुनिक विधा है। इसके अंतर्गत जीवन समग्र के रेशे-रेशे के यथार्थ को रचनाकार अपनी अद्‌भुत कल्पना के साथ बुनता है और एक अनोखा विश्व पाठकों के सम्मुख सम्मोहन हेतु रख देता है। जीवन की जटिलता को पूरी विराटता एवं संशिष्लिटता से छवियों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। रचनाकार उपन्यास में भिन्न-भिन्न मनोवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्ति चरित्रों के द्‌वारा आज के मानव का अधिक यथार्थ रूप प्रस्तुत कर सकता है।

हिन्दी उपन्यास की परंपरा सौ साल पुरानी रही है। प्रेमचंद जी ने सामाजिक सोद्‌देश्यता से पूर्ण उपन्यासों की रचना की। और उपन्यासों को उत्तम कलात्मक रूप भी प्रदान किया। इसी परंपरा में श्री अमृतलाल नागर (जन्म1916) का ऩाम लिया जा सकता है। इन्होंने सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यास लिखे। सामाजिक सोद्‌देश्यता से प्रेरित होकर अदने मनुष्य के दुःख-दर्द का यथार्थ चित्रण किया और परिणाम स्वरुप यथार्थवादी उपन्यासकार माने जाते हैं।यूं तो उन्होंने नाटक,कहानी,व्यंग्य,बाल साहित्य रेखाचित्र,जीवनी तमाम विधाओं में काम किया है। अनेक पुरस्कारों से पुरस्कृत भी हुए है।1947 से प्रारंभ कर 1991 वें तक में करीब 13 उपन्यासों की रचना की है। “मानस का हंस” का रचनाकाल 1972 है।

गोस्वामी तुलसीदास के जीवन पर आधारित इस उपन्यास की वस्तु रोचक है। तुलसीदास के जीवन के बारे में प्रामाणिक जानकारी बहुत कम उपलब्ध होती है। अधिकतर प्रचलित किंवदंतियाँ है, जिनके सही होने का कोइ प्रमाण नहीं मिलता। लेखक ने इस उपन्यास की कथा का निर्माण प्रचलित किंवदंतियाँ और तुलसीदास के ग्रंथों से उभरनेवाले व्यक्तित्व के आधार पर किया है।

उपन्यास में तुलसीदास का जन्म यमुना—तट के राजापुर से करीब एक गाँव में हुआ बताया गया है। पिता का नाम आत्माराम और मां का नाम हुलसी था। तुलसी के जन्मते ही मां का निधन हो गया। पिता ज्योतिषी थे, अतः बुरे नक्षत्रों में जन्म के कारण, जन्मते ही तुलसी को त्याग दिया। तुलसी का लालन-पालन एक दायी, पार्वती ने किया। तब उसका नाम था राम बोला। वह भिक्षावृत्ति से पेट पालते थे। तुलसीदास की पांच-छ साल की उम्र तक तो दायी का देहांत हो गया। उसके सम आयु मित्र ने उससे छल किया,झोंपडी जला दी और स्थान छोड़ने को विवश कर दिया। भटकते हुए वह सूकर खेत पहुंच गया।जहां महावीरजी के मंदिर में उसकी दोस्ती तो बंदरों से हुई पर, उसकी भेंट नरहरिदास बाबा से हुई। जो उसके गुरू बन गये। और इनकी निश्रा में ही तुलसीदास ने संस्कृत, ज्योतिष-शास्त्र, एवं धर्मग्रंथों की शिक्षा प्राप्त की। उस दौरान वह एक वेश्यापुत्री मोहिनी के प्रेम पाश में बंध गये थे।

अपना जीविकोपार्जन वह ज्योतिष एवं वाल्मिकी रामायण के कथावाचन से करते थे। यहां उनका विवाह यमुना पार के विद्‌वान ज्योतिषी पं. दीनबंधु की बेटी रत्नावली से हुआ। और उनके एक संतान भी

हुई। फिर तुलसी काशी चले आये। यहां अपने मित्र गंगाराम की एक समस्या के समाधान हेतु "रामाज्ञा प्रश्न" की रचना की। जिसके एवज में प्रचुर धन प्राप्त हुआ। फिर राजापुर लौट आए। पत्नी संतान समेत पिता के घर गयी थी। उनसे मिलने के अधैर्य ने उन्हें विचलित कर दिया स्थल-काल से परे वे ससुराल पहुंच गये। बे-समय, अधैर्य के कारण अपमानित एवं मजाक के पात्र बने। रत्नावली का मोह उन्हें यहाँ खींच लाया था। रत्नावली का व्यंग्य— **"स्त्री और पुरुष में यही तो अंतर है।नारी भले कामवश माता क्यों न बने,किंतु माता बनकर वह एक जगह निष्काम हो जाती है और पुरुष पिता बनकर भी दायित्वबोध भली प्रकार से अनुभव नहीं कर पाता। सच पूछो तो यह निरे चाम का लोभी है, जीव में रमे राम का नहीं। (मानस का हंस, पृ-252)**

इससे तुलसीदास को बोध हुआ कि मैं सांसारिक कर्मों में लिप्त रहकर अपना जीवन नष्ट कर रहा हूँ। मध्य रात्रि को ही पत्नी एवं संतान को छोड़कर हमेशा के लिए चल निकले। बाद में उस शिशु की भी मृत्यु हो गई। घर त्याग ने के पश्चात कई ग्रंथों की रचना की । उन्होंने अमर ग्रंथ 'रामचरित मानस' की भी रचना की।

काशी में रहते हुए तुलसीदास 'रामचरित मानस' के माध्यम से लोगों में भक्ति और भावात्मक एकता का मंत्र फूंकने लगे। वे लोक धर्म का प्रचार-प्रसार कर रहे थे, जिससे कई महंत और पंडित उनके विरुद्ध हो गये। लेकिन वे अपने मार्ग से न हटे। गांव-गांव और घर-घर तक राम भक्ति आधारित लोकधर्म को पहुंचाते रहे। उन्होंने रामलीला की भी शुरूआत की। काशी में अखाड़े खुलवाए जनता को बलशाली बनाने हेतु। महामारी के फैलने पर अखाड़े के ब्रह्मचारियों और युवकों ने जन-जन की सेवा की।

जब वे मानस की रचना के बाद काशी में रहे तब रत्नावली का आगमन काशी में हुआ और उसने तुलसीदास से वहीं रहने की आज्ञा मांगी। दूसरी ओर उसके आने से तुलसीदास के बारे में कई तरह की बातें फैल रही थी, ये भी उनके कानों तक पहुँचती थी। इसलिए उन्होंने लोक धर्म की रक्षा हेतु यह निर्णय किया कि रत्नावली को वापिस राजापुर भेज दिया जाय। उन्होंने रत्नावली को वचन दिया कि मृत्यु से पूर्व उससे मिलने अवश्य आयेंगे।और वे यह वचन निभाते है।

तुलसीदास जीवन पर्यंत अपने धर्म का पालन करते रहते हैं और रामचरित मानस, विनयपत्रिका आदि ग्रंथों की रचना कर तथा रामलीला का व्यापक प्रचार कर, लोक धर्म का आदर्श स्थापित करते है। तुलसीदास को आजीवन रूढ़िवादी समाज का विरोध सहना पड़ता है। वृद्धावस्था में कई बीमारियाँ घेर लेती है, और उनका समग्र जीवन संघर्ष में ही व्यतीत होता है।

हमने देखा कि मानस का हंस किवंदतियो पर आधारित तुलसीदास के जीवन की पीड़ा, अभाव, करूणा, तिरस्कार एवं संघर्ष से परिपूर्ण कथा है। कोमल हृदय के,अति संवेदनशील तुलसीजी पत्नी के मार्मिक वचन से आहत होते हैं और जीवन में बहुत बड़ा बदलाव आता है, क्रमशः अनेक श्रेष्ठ रचनाओं के द्वारा जग प्रसिद्धी पाते है, महाकवि के रुप में जाने जाते हैं।

नागरजी ने तुलसीदास के जीवन को तत्कालीन राजकीय, सांस्कृतिक परिवेश में समाज की गतिविधियों के साथ चित्रित किया है। तुलसीदास के जन्म समय, उत्तर में मुगल आपनी शासन–सत्ता स्थापित करने की कोशिष कर रहे थे। उनका संघर्ष था पठानों से। इस राजसत्ता की लड़ाई में पिसते थे गरीब, मज़दूर, आम आदमी। उपन्यास में अकबर के शासन काल को भी चित्रित किया है। राजनीतिक स्थिति अराजकता पूर्ण थी, जो उपन्यास के प्रारंभ में दिखाई देती है—-

"हूमायूं और शेरशाह की लड़ाई के पुराने दिनों की भगदड़ में इधर–उधर छितरा के भागनेवाले मुगल लड़वैये डाकू बनकर लूट–पाट और आतंक मचाने लगे, तब यह विक्रमपुर गांव पूरी तरह से लूट–पिट और खंड़हर बनकर सभ्यता के मानचित्र से मिट गया था। बस, दो–चार गरीब–गुरबे, छोटे काम करनेवाले हिंदु 15-20 मुसलमानों के घर ही बचे रहे थे।"(1)

उपन्यास के मध्य में अयोध्या में राम जन्मस्थान के ध्वंस और उसके स्थान पर मस्जिद का निर्माण, काशी के विश्वनाथ मंदिर के जीर्णोद्धार की घटनाओं से यह आभास मिलता है कि राजनीतिक स्थिति अस्थिर एवं डाँवाडोल थीं।

इस उथल-पुथल तथा संघर्ष के वातावरण में विजय प्राप्त किए हुए राजा-बादशाह उन प्रदेशों में सब कुछ तहस-नहस करने पर उतारु होते थे। उदा— "**खच्चरों पर लदा हुआ लूट–पाट का माल लेकर मुगल सिपाही जीत और लूट की मस्ती में गाते, बीच–बीच में एकाध बंदी या बंदिनी पर चाबुकें बरसाते जाते, अपने पड़ाव के सामनेवाले बड़े तंबु की तरफ बढ़ रहे हैं। सरदार मसनद पर बैठकर नाच देख रहा है।" (2)**

इतना ही नहीं राजघराने की औरतों को भी लूट का सामान समझकर उपभोग की बेजान चीजों की तरह खरीद-बेचा जाता था। राजकुमारी और रानियाँ अपनी इज्जत की रक्षा हेतु कुएं, नदी में डूबकर आत्महत्या कर लेती थीं। बन्दीजनों से कामवालियों का काम लिया जाता था। रास्ते में तुलसी, रामु, राजाभगत तथा संत बेनी माधव दास को एक पेड़ पर एक लाश लटकती दिखाई दी। उन्हें ज्ञात हुआ कि स्त्री की रक्षा करने में संघर्षशील पति को मुगल सिपाहियों ने फांसी दे दी, और स्त्री ने आत्मघात किया। कुछ सिपाही उन मृत शरीरों पर से रत्नालंकार लेकर, चील कौओं के लिए छोड़कर भाग गए।

ये वह समय था जब सत्ताधीशों की विलासिता और अधिकार प्राप्ति की लालसा अत्यधिक प्रबल थी। इस बात को नागरजी कहते हैं—— ।

"क्या हिंदु राजे—महाराजे, क्या मुगल—पठान सभी बड़े पाप परायण है। उनकी चेतना से धर्म शब्द ही लोप हो गया था। जो जितना बड़ा हाकिम उसे इतना ही बड़ा औरतों का रनिवास चाहिए। किसी की दस किसी की पचास, सौ, दो सौ, पांच सौ, और दिल्ली के रनिवास में तो सुना है कि पांच हजार रमणियाँ थी। इनके खर्चे के लिए नित्य ही प्रजा के प्राण खींचे जाते थे, राणा विलासी तो उनके चाकर दस हाथ आगे। ठंडी पतल काट ले जाए, गाय ,बैल आदि पशु हांक ले, कौन–सा ऐसा आसुरी कर्म था, जो ये कर्मचारी नहीं करते।" (3)

मुस्लिम शासक मूलतःकट्टर और सांप्रदायिक थे। अराजकता,विषमता,अन्याय इसके अंग थे। कोई नियम, मर्यादा या आदर्श तो विद्यमान था नहीं। भतीजा चाचा को, भाई-भाई को, पिता-पुत्र का वध करते थे या बंदी बनाकर राज्य पर अपना अधिकार पा लेते थे।

काशी के सुबेदार उमरा आगानूर ने काशी और जौनपुर के बड़े-बड़े जौहरियों, सराफों, कोठीवालों को एक दिन अकारण ही पकड़ बुलवाया और बंदी बना लिया। उदा— "**बंदी गृह में बंद सेठों ने वहाँ कर्मचारियों के मारफत के रिश्वत का प्रलोभन देकर अपने पकड़े जाने का कारण जानना चाहा। बाहर उनके सगे–संबंधी भी यही कह रहे थे। सरकारी चाकरो की जेबों में रिश्वत के पैसे पहुँचाकर भी न तो बंदियों को और उनके घरवालों को ही पकड़े जाने का कारण ज्ञात हो सका।**"

बटेश्वर मिश्र के उकसाने पर काशी के कोतवाल ने कुछ तांत्रिको के साथ निरपराध साधु संत सहित तुलसी को भी बंदी बना लिया। बदला लेने के लिए अहीर, केवट,ठाकुर आदि जातियों के वीर वानर सेना के रुप में कोतवाली पर टूट पड़े थे।

प्रजा में व्याप्त पापों को केवल वैयक्तिक राग—द्वेष का परिणाम न मानकर, व्यवस्था तंत्र बताते हुए तुलसी कहते है—— **"शासक दिल्ली में रहता है, उसे नित्य हीरे, मोती चाहिए। स्त्री और धन की लूट का नाम ही** कलिकाल **ह, सारे पाप यहीं से प्रारंभ होते है।"(4)**

इस उपन्यास की विशेषता है कि तत्कालीन सामाजिक परिवेश अपनी समग्रता में उपस्थित है। उस समय वर्ण व्यवस्था,ऊंच-नीच, आश्रम व्यवस्था नहीं थीं, पर संन्यासी साधु, भक्तों, योगियों आदि का बहुत आदर होता था, सम्मान का भाव भी था। स्त्रियों की स्थिति निम्न स्तर की रही। ये बातें नागरजी ने बड़ी शिद्दत से प्रस्तुत की है।

तत् युगीन वर्णामाश्रम एवं जाति व्यवस्था को आज भी समाज में यथातथ हम देख रहे हैं। आज भारतीय समाज में कुष्ट रोग की तरह पैठी है, धर्मनिरपेक्ष भारत की स्थिति एवं दशा में आधुनिकता के बावजूद कोई बदलाव नज़र नहीं आता। तुलसी की यह उक्ति बड़ी सार्थक है——

"छूत कही, अवधूत कही, राजपूत कही जोलहा कहा कोऊ——"

इसी से प्रतीत होता है कि तुलसी पर भी जाति के प्रश्न को लेकर कई आरोप लगाये गये थे। एक चमार— ब्रह्म हत्यारे को तुलसी ने भोजन क्या करवाया कि समस्त ब्राह्मण वर्ग उसके ब्राह्मणत्व पर संशय करने लगा। किसी ने तो तुलसी पर व्यंग्य भी कसा——-

"**राम से तो वह राम का प्यारा ब्रह्म पातकी चमार ही मिला सकता है। आपने तो उस हत्यारे के पैर भी धुलवाए थे।**"

"हाँ, दीन–दुर्बल और रोगी की सेवा करना मैं राम की सेवा करना ही मानता हूं।"

“सुना है आप जाति—पांति नहीं मानते।“

“कैसे ?”

“वर्णाश्रम धर्म को मानता हूं, परंतु प्रेम—धर्म को वर्णाश्रम से भी उपर मानता हूं।“(5)

दुर्भिक्ष-अकाल का इस उपन्यास में कई स्थान पर उल्लेख हुआ है। भूख, अकाल, महामारी आदि दैवी आपत्तियां है, फिर भी उसका उचित प्रबंध हो ही जाता है, पर उस समय व्यवस्था समुचित न थी। उदा—

“कुरूक्षेत्र में उन दिनो भीषण अकाल पड़ा था। दिल्ली,मथुरा,आगरा आदि जगहों में प्रजा त्राहि–त्राहि कर रही थीं। उजडा भूखंड, रुखी काया, कष्ट और फीके चेहरोवाली कंकालवत् कायाएँ इधर–उधर डोलती थीं। और भी एक जगह चार–चार मुट्ठी गेहुं—चावल के लिए लोग–बाग अपनी जवान स्त्रियों, लड़के–लड़कियों, तक बेच रहे थे।“(6)

क्षुधा शांति के लिए एक-दूसरे के मुंह का कौर छीनने के लिए किसी को कोई हानि नहीं पहुँचती थी। अकाल ग्रस्तता के कारण वर्ण व्यवस्था का भी कोइ विवाद नहीं था। इस समय में प्रजा इतनी दीन-हीन क्षुधातुर हो, तब भी हेमू के हाथों चावल-चीनी और घी के लड्डू खा खाकर मरने-मारने के लिए तैयार हो रहे है।

तुलसी युगीन समाज में नारी की स्थिति अति निम्न कोटि की हो गई थी। स्त्री के लिए परिवार में अनेक प्रकार के बंधन, स्वतंत्रता और अधिकार के नाम पर कुछ नहीं। आर्थिक रुप से पुरूषाश्रित रहना पड़ता था। औरतों को लूट के सामान की तरह, बेजान चीजों के समान खरीदा-बेचा जाता था। इस संदर्भ में तुलसीदास कहते है—-–

“स्त्री और धन की लूट का नाम ही कलिकाल है, सारे पाप यहीं से आरंभ होते है।“(7)

इस युग की विलासिता के चर्चे तो इतिहास प्रसिद्ध है। बादशाह तो खैर पर पदाधिकारी भी अनेक स्त्रियाँ रखते थे, परिणाम था दुराचार जो नाश की दिशा में ले जाता है। शासकों की विलासिता के परिणाम स्वरुप, जनता प्रभावित हुई और समाज में चोतरफ अनाचार-दुराचार,अराजकता, नारी व्यापार जैसी विकृ-

तियाँ फूली फली थी। शासक ही मानो शोषक बन गया था।

ये वो समय था जब लोगों की बुद्धि पर पटी बंधी हुई थीं। बिना सोचे-समझे एक अंधे प्रवाह में लोग बह रहे थे। गति जिस दिशा में हो रही है, क्या वह सही है या नहीं, ये सोचने का विवेक भी लोगो में नहीं था। काशी में चूहों के मरने से बीमारी तेज गति से फैली। अफवाह यह भी है कि—- **“किसी जादूगर के शिष्य ने कुप्पे में भरकर ऐसा रसायन छोड़ा है कि चूहे मरते हैं और बीमारी फैल रही है। ऐसा इसलिए किया गया है कि काशी के सभी निवासी मारे जाएं और उनकी माल मत्ता, रुपए–टके आसानी से हाथ में आए।“(8)**

नागरजी ने इस उपन्यास में तुलसी के समसामयिक युग के धार्मिक संघर्ष और सांप्रदायिक संकीर्णताओं को चित्रित किया है। मुगल सम्राटों की इस्लाम के प्रति कट्टर आस्था और असहिष्णुता ने हिन्दु धर्म की नींव हिला दी थी। जहां तक हिन्दु मंदिरों, मूर्तियों एवं आस्थाओं के ध्वस्त करने का प्रश्न है, वहां मुगल और पठान एक साथ थे। इसी कारण से 16वीं शती के तीसरे दशक तक मुस्लिमों के सतत आक्रमण एवं प्रहारों से हिन्दु समाज पूरी तरह विश्रृंखलित एवं दिग्भ्रमित हो उठा था। ब्राह्मणों में उच्चता का मिथ्या दर्प और जात्याभिमान था, पर पारस्परिक शिक्षा, संस्कार, त्याग, ऊर्जा एवं शक्ति का उनके भीतर से लोप हो चला था। तत्कालीन हिन्दु समाज भी कई संप्रदायों में बंटा हुआ था। संप्रदायों के लोगो में परस्पर विद्वेष की अग्नि प्रज्वलित रहती थी। कभी-कभी इतनी जोर से भभक उठती कि दंगे-फसाद भी हो जाते थे। यही सांप्रदायिक समस्या आज के सामाजिक जीवन में अभिशाप—सी बनी हुई है। अयोध्या में राम जन्मभूमि और बाबरी मस्जिद विवाद चल रहा था, जो आज भी हिन्दु-मुस्लिम विद्वेष का कारण बना हुआ ही है। इस रचना में नागरजी ने इस प्रश्न को सुलझाने का प्रयास किया है। जन्मभूमि के प्रश्न को लेकर हिंदु-मुस्लिमों में संघर्ष और आतंक उत्पन्न होता है, तब करुणाद्र स्वर में गोस्वामीजी कहते

है—-

"**रामभद्र आप साक्षी है,मैंने इस मस्जिद में अपने मनमें कोई दुर्भाव नहीं रखा। पूजा भूमि इस रुप में भी पूज्य ही है। अब भी यहाँ निर्गुण निराकार परब्रह्म के प्रति ही माथा झुकाया जाता है।"(9)**

तुलसीदास अपनी भावात्मक अभिव्यक्ति में हिदु—मुस्लिम ऐक्य की बात करते ही है जो वर्तमान में हिंदु-मुस्लिम ऐक्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

तुलसीदास के मन में राम और काम का द्वन्द्व चलता है, जब से वह मोहिनी के संगीत के रागपाश में बंध जाते हैं। पर समय सच की अनुभूति कराता है, तब मोहिनी से दूर होते हैं तो उन्हें लगता है—जैसे जीव का अपने एक जन्म से साथ छूट गया हो। रत्नावली के प्रति तुलसी का प्रेम उनके काम और राम के संघर्ष की गाथा को प्रस्तुत करता है। जिसको स्वयं तुलसी भी स्वीकार करते है—-

"**मेरा द्वन्द्व आरंभ से ही काम वासना से था। मेरी अंत–र्बाह्य चेतना अपने भीतर वाले काम हठ से अपने राम हठ को श्रेष्ठ मानती थीं।"(10)**

कुल मिलाकर कह सकते है कि **मानस का हंस** तुलसीदास की जीवनी ही नहीं, उस युग का सांस्कृतिक इतिहास भी है। लेखक ने तुलसीदास के बहाने उस युग की वास्तविक दशा का चित्रण तो किया ही है, उस युग के सामाजिक, धार्मिक अंतरविरोधो का चित्रण भी किया है, जो स्वयं तुलसी की जीवनी में दिखाई देते हैं। यह कैसी विडंबना है कि जो कवि अपने आराध्य राम पर यह लांछन नहीं लगने देना चाहता कि उन्होंने अपनी पत्नी का परित्याग कर दिया था, यही कवि लोक-धर्म की रक्षा के लिए अपनी पत्नी को अंगीकार नहीं कर पाता। तुलसी लोक कल्याण की भावना से प्रेरित होकर धर्म को लोक धर्म का रुप देना चाहते है। वे सामज को लोक आदर्श में बांधकर एक करना चाहते है, इसीलिए रामलीला का प्रारंभ करते है। महामारी या अकाल के समय वे दुःखियों की सेवा करने का अभियान चलाते है। यहां तक की मठ की गद्दी भी छोड़

देते हैं क्योंकि सामान्य जन से विलगता का अनुभव करते है। इस उपन्यास में तुलसी समाज सुधारक, जननायक, युगदृष्टा के रुप में उभरकर आते है।

रचनाकार का उद्देश्य लोकोन्मुखी आदर्श को प्रस्तुत करना है। तुलसी के जीवन के माध्यम से कहना चाहते है कि वही रचनाकार महान होता है जो अपने को साधारण जन की पीड़ा से जोड़ता है, जन-जन की वेदना को अपने साहित्य में अभिव्यक्ति देता है।

इस उपन्यास में भक्ति आंदोलन के सांस्कृतिक-सामाजिक पक्ष को रखते हुए, ये बताया है कि हम वर्तमान समस्याओं का सामना तभी कर सकते है, जब जन सामान्य का उत्पीड़न समाप्त हो, भेदभाव की दीवारें टूटें और सभी लोगों में एकता और भाईचारे की भावना प्रबल रुप से पनपे।

यह कृति आज भी प्रासंगिक इसलिए है कि ये हमें धार्मिक, सांप्रदायिक, जातिवाद से ऊपर उठकर मानवतावादी दृष्टि का अनमोल संदेश देती है।

Provided by:- Dr .Abhishek Mishra

Dept Of Hindi

RNLKWC(Autonumus)

4th Semester BA(Hons) Hindi